E-ISSN: 3048-6041 | Volume- 3, Issue- 7 | July 2026

धर्मवीर भारती के गीतिनाट्य 'अंधा युग' की कथ्य-चेतना

डॉ. सुरेन्द्र कुमार
एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी, राजकीय महाविद्यालय, भिवानी, हरियाणा

सारांश

धर्मवीर भारती का 'अंधा युग' आधुनिक हिन्दी साहित्य का एक महत्त्वपूर्ण गीतिनाट्य है, जिसमें महाभारत के युद्धोत्तर प्रसंग के माध्यम से आधुनिक मानव-सभ्यता के नैतिक, सांस्कृतिक और अस्तित्वगत संकट का प्रभावशाली चित्रण किया गया है। इस कृति की कथ्य-चेतना युद्ध-विरोध, मानवीय मूल्यों की रक्षा, सत्ता की विवेकहीनता, मर्यादा के विघटन तथा नैतिक उत्तरदायित्व पर आधारित है। भारती ने पौराणिक कथा को समकालीन यथार्थ का रूपक बनाकर यह स्थापित किया है कि युद्ध की सबसे बड़ी क्षति मानवता और नैतिक चेतना की होती है। नाटक के पात्र बाह्य संघर्ष के साथ-साथ आंतरिक द्वंद्व, अपराध-बोध और मानसिक विघटन का अनुभव करते हैं, जिससे अस्तित्ववादी चेतना का सशक्त स्वर उभरता है। कृष्ण के माध्यम से लेखक विनाश के बीच भी विवेक, साहस, सृजनशीलता और पुनर्निर्माण की संभावना में विश्वास व्यक्त करते हैं। इस प्रकार 'अंधा युग' केवल महाभारत का पुनर्पाठ नहीं, बल्कि आधुनिक युग के लिए मानवतावादी चेतना, नैतिक पुनर्जागरण और सांस्कृतिक पुनर्स्थापना का कालजयी संदेश है।

बीज शब्द- कथ्य-चेतना, पौराणिक पुनर्पाठ, युद्धोत्तर संवेदना, अस्तित्ववादी चेतना, सांस्कृतिक विघटन, मानवीय मूल्य, नैतिक उत्तरदायित्व, मानवतावाद।

मूल आलेख

साहित्य में 'कथ्य' केवल कथावस्तु या घटनाओं का क्रम नहीं होता, अपितु वह रचनाकार की जीवन-दृष्टि, वैचारिकता तथा सामाजिक चेतना का समन्वित रूप होता है। कथ्य के माध्यम से लेखक अपने युग के सत्य को अभिव्यक्त करता है तथा समाज के सम्मुख जीवन-दर्शन प्रस्तुत करता है। इस दृष्टि से 'अंधा युग' का कथ्य युद्धोत्तर मनुष्य की मानसिक विडम्बना और सांस्कृतिक संकट का कथ्य है।

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाट्य-साहित्य में धर्मवीर भारती का 'अंधा युग' एक ऐसी कालजयी कृति है, जिसने भारतीय पौराणिक परम्परा को आधुनिक जीवन-दृष्टि के साथ जोड़कर उसे नवीन अर्थवत्ता प्रदान की। महाभारत के अठारहवें दिन से लेकर श्रीकृष्ण की मृत्यु तक की घटनाओं पर आधारित यह गीतिनाट्य केवल पौराणिक आख्यान का पुनर्पाठ नहीं है, अपितु आधुनिक मनुष्य के नैतिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक तथा अस्तित्वगत संकट का सशक्त रूपक है। द्वितीय विश्वयुद्ध के उपरान्त उत्पन्न निराशा, मूल्य-विघटन, हिंसा, अनास्था तथा सत्ता-संघर्ष को धर्मवीर भारती ने महाभारत की पृष्ठभूमि में रूपायित कर यह सिद्ध किया कि इतिहास की त्रासदियाँ समय बदलने पर भी समाप्त नहीं होतीं; वे नए रूपों में पुनः उपस्थित होती रहती हैं। इसी कारण 'अंधा युग' को आधुनिक हिन्दी नाटक की प्रतिनिधि कृति माना जाता है। डॉ. माधव सोनटक्के ने इसकी इसी विशिष्टता की ओर संकेत करते हुए लिखा

Published: 20 July 2026
DOI: https://doi.org/10.70558/SPIJSH.2026.v3.i7.45838
Copyright © 2026 The Author(s). This work is licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY 4.0).

है- "पौराणिक पृष्ठभूमि में समकालीन जिन्दगी के यथार्थ-बोध को प्रक्षेपित या उद्घाटित करने वाले नाटकों के लिए 'अंधा युग' एक आदर्श प्रस्तुत करने की क्षमता रखने वाला नाटक है।"[1] यह कथन स्पष्ट करता है कि 'अंधा युग' की महत्ता उसके पौराणिक कथानक में नहीं, अपितु उसकी समकालीन कथ्य-चेतना में निहित है। भारती ने महाभारत के पात्रों और घटनाओं के माध्यम से आधुनिक सभ्यता के संकट, युद्धोन्माद, सत्ता की अंधता तथा मानवीय मूल्यों के विघटन का चित्र प्रस्तुत किया है।

धर्मवीर भारती ने महाभारत की कथा का चयन इसलिए नहीं किया कि वे इतिहास का पुनर्वर्णन करना चाहते थे, अपितु इसलिए किया कि वे आधुनिक मनुष्य को यह दिखाना चाहते थे कि जब सत्ता विवेकहीन हो जाती है, तब प्रत्येक युग 'अंधा युग' बन जाता है। "महाभारत में जो कुछ हुआ और उस समय के सत्ताधारियों ने जो कुछ किया, उसके परिणाम दूसरे विश्वयुद्ध के बाद की विभीषिकाओं से बहुत अधिक मेल खाते थे। इसी आलोक में भारती ने महसूस किया कि युद्ध व्यक्ति और समाज की नैतिक मान्यताओं का उच्छेद कर डालता है।"[2] यह मत 'अंधा युग' की मूल संवेदना को स्पष्ट करता है। धर्मवीर भारती के लिए महाभारत केवल अतीत का इतिहास नहीं, अपितु वर्तमान का दर्पण है। महाभारत का युद्ध और द्वितीय विश्वयुद्ध-दोनों ही मनुष्य की नैतिक पराजय के प्रतीक हैं।

'अंधा युग' का कथानक महाभारत के युद्ध की समाप्ति से आरम्भ होता है। सामान्यतः महाभारत की चर्चा विजय और पराजय के संदर्भ में की जाती है, किन्तु धर्मवीर भारती युद्ध के बाद के उस वातावरण को केन्द्र में रखते हैं, जहाँ चारों ओर मृत्यु, शोक, अपराध-बोध और निरर्थकता व्याप्त है। इस दृष्टि से उनका उद्देश्य युद्ध की वीरगाथा लिखना नहीं, अपितु युद्ध की मानवीय कीमत को उद्घाटित करना है। धर्मवीर भारती का विश्वास था कि इतिहास का सबसे बड़ा सत्य युद्ध की विजय नहीं, बल्कि युद्ध के बाद बची हुई मानवता की परीक्षा है। इसलिए उन्होंने युद्धोत्तर परिस्थितियों को कथ्य का आधार बनाया। इस संदर्भ में नाटक के अंतिम दार्शनिक स्वर में वे लिखते हैं- "मेरा एक अंश निष्क्रिय रहेगा, लेकिन शेष अंश का दायित्व सभी व्यक्ति लेंगे और सभी परिस्थितियों का अतिक्रमण करके नूतन सृजन, निर्भयता, साहस आदि के क्षणों में मैं बार-बार जीवित हो उठूँगा।"[3] यह उद्धरण 'अंधा युग' की मूल जीवन-दृष्टि का उद्घोष है। यहाँ कृष्ण किसी धार्मिक सत्ता के रूप में नहीं, बल्कि मानवीय विवेक, साहस और सृजनशीलता के प्रतीक के रूप में उपस्थित हैं। धर्मवीर भारती यह विश्वास व्यक्त करते हैं कि यदि मनुष्य अपने उत्तरदायित्व को स्वीकार करे, तो विनाश के बाद भी पुनर्निर्माण सम्भव है।

'अंधा युग' की कथ्य-चेतना का सबसे महत्त्वपूर्ण आधार युद्ध-विरोध है। धर्मवीर भारती ने महाभारत के युद्ध को केवल दो राजवंशों के संघर्ष के रूप में नहीं, अपितु सम्पूर्ण मानवता की पराजय के रूप में चित्रित किया है। महाभारत का युद्ध समाप्त हो चुका है, परन्तु विजय का कोई उल्लास नहीं है। चारों ओर केवल मृत्यु, शोक, पश्चाताप और नैतिक विघटन का वातावरण है। यही कारण है कि 'अंधा युग' की शुरुआत ही विजय-घोष से नहीं, बल्कि एक ऐसे युग के आगमन की घोषणा से होती है, जो अपनी आत्मा तक में विकृत हो चुका है। धर्मवीर भारती ने पूरे नाटक को आधुनिक युग के सांस्कृतिक संकट का रूपक बनाया है। उनके अनुसार युद्ध केवल शरीरों का संहार नहीं करता, बल्कि मनुष्य की चेतना को भी विकृत कर देता है। इसी कारण नाटक के आरम्भ में वे लिखते हैं-

"युद्धोपरान्त,

यह अंधा युग अवतरित हुआ

जिसमें स्थितियाँ, मनोवृत्तियाँ, आत्माएँ-सब विकृत हैं

है एक बहुत पतली डोरी मर्यादा की

पर वह भी उलझी है दोनों ही पक्षों में

सिर्फ़ कृष्ण में साहस है सुलझाने का

वह है भविष्य का रक्षक, वह है अनासक्त

पर शेष अधिकतर हैं अंधे

पथभ्रष्ट, आत्महारा, विगलित

अपने अन्तर की अंधगुफाओं के वासी

यह कथा उन्हीं अंधों की है;

या कथा ज्योति की है अंधों के माध्यम से।"[4]

इन पंक्तियों में धर्मवीर भारती ने सम्पूर्ण नाटक की वैचारिक भूमि तैयार कर दी है। इनमें सम्पूर्ण गीतिनाट्य का दार्शनिक आधार निहित है। यहाँ 'स्थितियाँ' सामाजिक व्यवस्था का, 'मनोवृत्तियाँ' नैतिक पतन का और 'आत्माएँ' सांस्कृतिक विघटन का प्रतीक हैं। यहाँ युद्ध का परिणाम केवल भौतिक विनाश नहीं, अपितु मनोवैज्ञानिक और सांस्कृतिक विघटन है। युद्ध मनुष्य की संवेदनाओं को कुंठित कर देता है और उसे नैतिक रूप से दिवालिया बना देता है। यही कारण है कि 'अंधा युग' केवल महाभारत का नाटक नहीं, बल्कि प्रत्येक युद्धग्रस्त सभ्यता का नाटक बन जाता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि धर्मवीर भारती ने 'अंधा युग' में महाभारत के युद्धोत्तर प्रसंग को आधार बनाकर आधुनिक युग की नैतिक विडम्बनाओं का सशक्त चित्रण किया है। पौराणिक कथा यहाँ समकालीन यथार्थ का माध्यम बन जाती है। कथ्य की दृष्टि से यह गीतिनाट्य युद्ध-विरोध, मानवता, नैतिक उत्तरदायित्व तथा पुनर्निर्माण की चेतना का घोष है। यही कारण है कि 'अंधा युग' आधुनिक हिन्दी साहित्य की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कृतियों में गिना जाता है। स्पष्ट है कि धर्मवीर भारती के लिए महाभारत केवल ऐतिहासिक आख्यान नहीं है; वह आधुनिक विश्वयुद्धों की त्रासदी का सांकेतिक रूप है। युद्ध की वास्तविक पराजय किसी पक्ष की नहीं, अपितु मानव-मूल्यों की पराजय होती है।

धर्मवीर भारती ने 'अंधा युग' में युद्ध के बाह्य विनाश से अधिक उसके आन्तरिक प्रभाव को चित्रित किया है। युद्ध समाप्त हो जाता है, परन्तु उसके घाव व्यक्ति की चेतना में जीवनभर बने रहते हैं। यही कारण है कि महाभारत का युद्ध आधुनिक मनुष्य के भीतर निरन्तर चलता रहने वाला संघर्ष बन जाता है। मीरा गुप्ता इस मनोवैज्ञानिक पक्ष की अत्यन्त प्रभावशाली व्याख्या करती हैं- "महाभारत में युद्ध के पश्चात् कौरवों और पांडवों की अमर्यादा, अधर्म और असत्यता से पुनर्जीवित अंध-प्रवृत्तियाँ वास्तव में आधुनिक युग की प्रवृत्तियाँ हैं, जिन्हें आज का व्यक्ति भोग रहा है। महाभारत के युद्ध के पश्चात् आरम्भ हुई समस्याएँ वास्तव में व्यक्ति के भीतर का महाभारत हैं। उसमें अहं का महाभारत है, जिसे वह आरम्भ होने के पश्चात् जीवनभर भोगता रहता है। उसका दंभ, उसके मन की विकृतियाँ और उसकी मनोवृत्तियों की बीभत्सता-ये सब व्यक्ति के दंभ का परिणाम हैं, जिन्हें किसी भी तरह महाभारत के युद्ध की विभीषिका से कम नहीं कहा जा सकता।"[5] धर्मवीर भारती यह सिद्ध करते हैं कि वास्तविक महाभारत कुरुक्षेत्र में नहीं, बल्कि मनुष्य के भीतर घटित होता है। अहंकार, प्रतिशोध, हिंसा और स्वार्थ-ये सभी आधुनिक मनुष्य के अन्तःसंघर्ष के रूप हैं।

'अंधा युग' में धृतराष्ट्र की शारीरिक अंधता से कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण नैतिक अंधापन है। धृतराष्ट्र अन्याय को जानते हुए भी पुत्र-मोह के कारण उसका विरोध नहीं करते। इसी प्रकार गांधारी, दुर्योधन, अश्वत्थामा और अन्य पात्र

भी किसी-न-किसी मानसिक अंधेपन से ग्रस्त हैं। इस प्रकार धर्मवीर भारती का 'अंधा युग' वास्तव में उस युग का प्रतीक है, जहाँ सत्ता विवेक खो देती है और समाज मर्यादा। डॉ. दिनेशचन्द्र वर्मा ने इस तथ्य को अत्यन्त सटीक शब्दों में व्यक्त किया है- "अंधा युग मानव-मूल्यों के विखंडन की चरम गाथा है, परिणति है। इसलिए युग का अंधापन रचना में आद्योपान्त व्याप्त है। सत्ता के अंधेपन के कारण ही कौरवों में भयानक प्रतिहिंसा और अन्य तमाम तरह की विकृतियाँ जन्म लेती हैं। 'अंधा युग' स्थितियों, मनोवृत्तियों, मर्यादा और मूल्यों की विकृति से क्षयग्रस्त सांस्कृतिक त्रासदी का काव्य-नाटक है।"[6] यह मत 'अंधा युग' की कथ्य-चेतना की व्यापकता को उद्घाटित करता है। यहाँ अंधापन केवल धृतराष्ट्र की समस्या नहीं, अपितु सम्पूर्ण सभ्यता की मानसिक अवस्था है।

धर्मवीर भारती के अनुसार युद्ध का मूल कारण बाहरी शक्ति-संघर्ष नहीं, अपितु मर्यादा का उल्लंघन है। जब समाज से सत्य, धर्म और नैतिक अनुशासन समाप्त हो जाते हैं, तब युद्ध अनिवार्य हो जाता है। इसी सत्य को कृष्ण, भीष्म और द्रोण बार-बार चेतावनी के रूप में व्यक्त करते हैं-

"भीष्म ने कहा था,

गुरु द्रोण ने कहा था,

इसी अन्तःपुर में,

आकर कृष्ण ने कहा था-

मर्यादा मत तोड़ो,

तोड़ी हुई मर्यादा

कुचले हुए अजगर-सी

गुंजलिका में कौरव वंश को

लपेटकर सूखी लकड़ी-सा तोड़ डालेगी।"[7]

यह केवल कौरवों के लिए चेतावनी नहीं, अपितु सम्पूर्ण मानव-समाज के लिए शाश्वत संदेश है। धर्मवीर भारती यह स्पष्ट करते हैं कि जब व्यक्ति अपनी सीमाओं का अतिक्रमण करता है, तब वही मर्यादा उसके विनाश का कारण बन जाती है। इसी संदर्भ में एक आलोचक का मत अत्यन्त उल्लेखनीय है- "सामान्य रूप से जीवन में मर्यादा एवं सत्य की बड़ी महत्ता होती है। धर्मवीर भारती जी इन उदात्त मूल्यों से बड़े अभिभूत दिखाई पड़ते हैं। उन्होंने 'अंधा युग' में मर्यादा एवं सत्य की प्रतिष्ठा बड़ी कुशलता एवं सघनता के साथ की है।"[8] स्पष्ट है कि 'अंधा युग' का उद्देश्य केवल युद्ध का चित्रण नहीं, अपितु मर्यादा की पुनःस्थापना है।

धर्मवीर भारती युद्ध की विभीषिका को केवल रणभूमि तक सीमित नहीं रखते। वे युद्ध के सामाजिक परिणामों का अत्यन्त मार्मिक चित्र प्रस्तुत करते हैं। राजमहल, जो कभी वैभव और उल्लास का प्रतीक था, अब शोक का निवास बन चुका है-

"सूने गलियारे में

जिसके इन रत्न-जड़ित फर्शों पर कौरव-वधुएँ

मंथर-मंथर गति से

सुरक्षित पवन-तरंगों-सी चलती थीं,

आज वे विधवा हैं।"[9]

इन पंक्तियों में युद्ध के कारण उत्पन्न नारी-वेदना का अत्यन्त मार्मिक चित्र उपस्थित हुआ है। युद्ध केवल सैनिकों की मृत्यु नहीं लाता; वह परिवारों, स्त्रियों, बच्चों और सम्पूर्ण सामाजिक संरचना को उजाड़ देता है। देशराज सिंह भाटी ने इसी तथ्य को विस्तार से स्पष्ट करते हुए लिखा है- "इसमें युद्ध से पूर्व और पश्चात् सेना की दशा का मार्मिक वर्णन किया गया है। जो सेना अठारह दिन पहले बड़े अरमान और उत्साह लेकर रंग-बिरंगी ध्वजा उड़ाती हुई रणक्षेत्र की ओर गई थी, वही जब लौटी तो उसका सब कुछ स्वाहा हो गया। केवल टूटे रथ, ब्राह्मण, स्त्रियाँ, चिकित्सक, विधवाएँ, बौने, बूढ़े, घायल और जर्जर बचे।"[10] यह टिप्पणी सिद्ध करती है कि धर्मवीर भारती ने युद्ध को केवल राजनीतिक घटना नहीं माना, अपितु उसे मानवीय सभ्यता के विघटन के रूप में देखा।

स्पष्ट है कि 'अंधा युग' की कथ्य-चेतना का मूल आधार युद्ध-विरोध, सत्ता की विवेकहीनता, मर्यादा का विघटन तथा मानवीय मूल्यों की रक्षा है। धर्मवीर भारती ने महाभारत के युद्ध को आधुनिक विश्व की सांस्कृतिक त्रासदी का प्रतीक बनाते हुए यह स्थापित किया है कि युद्ध की सबसे बड़ी क्षति भूमि या राज्य की नहीं, बल्कि मनुष्य की आत्मा की होती है। इसलिए 'अंधा युग' आज भी विश्व-मानवता के लिए उतना ही प्रासंगिक है, जितना उसके रचना-काल में था।

धर्मवीर भारती के 'अंधा युग' की कथ्य-चेतना का एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण आयाम अस्तित्ववादी चेतना है। यह गीतिनाट्य केवल युद्ध की विभीषिका का वर्णन नहीं करता, अपितु युद्ध के बाद व्यक्ति के भीतर उत्पन्न मानसिक विघटन, अपराध-बोध, अकेलेपन, अनास्था तथा आत्म-संघर्ष का भी अत्यन्त प्रभावशाली चित्रण करता है। आधुनिक अस्तित्ववादी दर्शन की मूल मान्यता है कि मनुष्य अपने निर्णयों के लिए स्वयं उत्तरदायी है और उसका भविष्य किसी पूर्वनिर्धारित नियति से नहीं, बल्कि उसके कर्मों से निर्मित होता है। धर्मवीर भारती ने इसी विचार को भारतीय सांस्कृतिक संदर्भ में अत्यन्त मौलिक रूप प्रदान किया है।

युद्ध के उपरान्त अश्वत्थामा, युयुत्सु, संजय, धृतराष्ट्र और गांधारी जैसे सभी पात्र किसी-न-किसी मानसिक पीड़ा से गुजरते हैं। प्रत्येक पात्र अपने भीतर एक ऐसे महाभारत को जी रहा है, जो बाहरी युद्ध से कहीं अधिक भयानक है। इस प्रकार 'अंधा युग' आधुनिक मनुष्य की अस्तित्वगत विडम्बना का काव्यात्मक दस्तावेज बन जाता है। "युद्ध ने दुर्योधन जैसे सम्राट को किस अधोगति तक पहुँचा दिया, उसे किस दुर्दशा के कगार पर लाकर खड़ा कर दिया- इसके लिए पात्र दुर्योधन का परिचय देना नाटककार का उद्देश्य नहीं है। दुर्योधन की अधोगति के माध्यम से वह उस मानव को अपने उद्देश्य से परिचित कराता है, जो युद्ध की विभीषिकाओं में गिरकर अपना प्रभुत्व खो रहा है और अपने अस्तित्व को समाप्त कर रहा है। उस युद्ध ने अश्वत्थामा को पशु बना दिया, युयुत्सु जैसे आस्थावान को अनास्थावान बना दिया, तो क्या आज का मानव इन पशु-प्रवृत्तियों से बच सकता है?"[11] धर्मवीर भारती यह दिखाना चाहते हैं कि युद्ध केवल शरीरों का संहार नहीं करता, अपितु मनुष्य के भीतर छिपी हुई पशु-प्रवृत्तियों को भी मुक्त कर देता है। अश्वत्थामा का अमानवीय प्रतिशोध आधुनिक मनुष्य की हिंसक मानसिकता का प्रतीक बन जाता है, जबकि युयुत्सु की अनास्था उस संवेदनशील व्यक्ति की त्रासदी है, जो अपने समय की नैतिक विफलताओं से टूट जाता है।

यद्यपि 'अंधा युग' का वातावरण निराशा, हिंसा और विनाश से परिपूर्ण है, फिर भी धर्मवीर भारती इसे निराशावादी नाटक नहीं बनने देते। कृष्ण के माध्यम से वे यह प्रतिपादित करते हैं कि इतिहास का भविष्य अभी समाप्त नहीं हुआ है। मनुष्य यदि अपने उत्तरदायित्व को स्वीकार करे, तो विनाश के बाद भी पुनर्निर्माण सम्भव है। इसमें कृष्ण

किसी चमत्कारिक देवता के रूप में नहीं, बल्कि मानवीय विवेक, साहस, सृजन और नैतिक उत्तरदायित्व के प्रतीक के रूप में उपस्थित हैं। धर्मवीर भारती का विश्वास है कि कृष्ण का वास्तविक अस्तित्व मनुष्य की श्रेष्ठ मानवीय चेतना में है। जब-जब मनुष्य अन्याय के विरुद्ध खड़ा होगा तथा सृजन और साहस का मार्ग अपनाएगा, तब-तब कृष्ण पुनः जीवित होंगे। यही 'अंधा युग' की सबसे बड़ी मानवीय उपलब्धि है। नाटक विनाश का वर्णन करके समाप्त नहीं होता, बल्कि नव-निर्माण की सम्भावना के साथ समाप्त होता है। इस प्रकार धर्मवीर भारती अस्तित्ववादी निराशा को मानवतावादी आशा में रूपान्तरित कर देते हैं।

धर्मवीर भारती का 'अंधा युग' अपने समय तक सीमित कृति नहीं है। इसकी कथ्य-चेतना आज इक्कीसवीं शताब्दी में भी उतनी ही सार्थक है। वर्तमान विश्व युद्ध, आतंकवाद, धार्मिक कट्टरता, परमाणु हथियारों की होड़, राजनीतिक स्वार्थ, पर्यावरणीय संकट तथा नैतिक अवमूल्यन जैसी समस्याओं से जूझ रहा है। इन परिस्थितियों में 'अंधा युग' हमें यह चेतावनी देता है कि यदि मनुष्य विवेक, मर्यादा और मानवीय मूल्यों को छोड़ देगा, तो प्रत्येक युग 'अंधा युग' बन जाएगा। धर्मवीर भारती का उद्देश्य केवल महाभारत का पुनर्कथन नहीं था। उन्होंने सत्ता के अंधेपन, नैतिक पतन और सांस्कृतिक विघटन को आधुनिक युग की सबसे बड़ी समस्या के रूप में देखा। यही कारण है कि 'अंधा युग' आज भी युद्ध-विरोध, मानवतावाद और नैतिक पुनर्जागरण का घोष बनकर हमारे सामने उपस्थित होता है।

उपसंहार-

धर्मवीर भारती का 'अंधा युग' आधुनिक हिन्दी साहित्य की एक ऐसी कालजयी कृति है, जिसमें पौराणिक कथा के माध्यम से आधुनिक मानव-सभ्यता के गहन संकट का कलात्मक और दार्शनिक चित्रण किया गया है। इसकी कथ्य-चेतना युद्ध-विरोध, सत्ता की विवेकहीनता, मूल्य-विघटन, अस्तित्वगत संकट, मानवीय उत्तरदायित्व तथा सांस्कृतिक पुनर्जागरण जैसे बहुआयामी पक्षों को समेटे हुए है। धर्मवीर भारती ने यह सिद्ध किया कि महाभारत का युद्ध केवल इतिहास की घटना नहीं, अपितु प्रत्येक युग की मानसिक स्थिति है। जब सत्ता न्याय से विमुख होती है, जब व्यक्ति अहंकार और प्रतिशोध से संचालित होता है, जब मर्यादा टूटती है और जब सत्य की उपेक्षा होती है, तब सम्पूर्ण सभ्यता 'अंधा युग' में प्रवेश कर जाती है। किन्तु भारती केवल संकट का चित्रण करके नहीं रुकते। कृष्ण के माध्यम से वे यह विश्वास व्यक्त करते हैं कि मनुष्य के भीतर निहित विवेक, साहस, सृजनशीलता और नैतिक चेतना कभी पूर्णतः नष्ट नहीं होती। यही विश्वास 'अंधा युग' को केवल युद्ध का शोकगीत नहीं, बल्कि मानवता के पुनर्जागरण का महाकाव्यात्मक गीतिनाट्य बना देता है। इस दृष्टि से 'अंधा युग' की कथ्य-चेतना भारतीय सांस्कृतिक परम्परा और आधुनिक मानवतावादी चिंतन का अद्भुत समन्वय है।

संदर्भ सूची

1. आधुनिक हिन्दी-मराठी नाटक - डॉ. माधव सोनटक्के, पृष्ठ 19
2. समकालीन संवेदना और हिन्दी नाटक - डॉ. शेखर शर्मा, पृष्ठ 193
3. कनुप्रिया तथा अन्य कृतियाँ - धर्मवीर भारती, पृष्ठ 144
4. अंधा युग - धर्मवीर भारती, पृष्ठ 12
5. अंधा युग: एक समीक्षा - मीरा गुप्ता, पृष्ठ 76
6. समकालीन हिन्दी नाटक एवं नाटककार - डॉ. दिनेशचन्द्र वर्मा, पृष्ठ 196
7. अंधा युग - धर्मवीर भारती, पृष्ठ 19

8. धर्मवीर भारती और उनका अंधा युग - डॉ. मदनलाल, पृष्ठ 181

9. अंधा युग - धर्मवीर भारती, पृष्ठ 14

10. अंधा युग: एक विवेचन - देशराज सिंह भाटी, पृष्ठ 47

11. अंधा युग: एक समीक्षा - मीरा गुप्ता, पृष्ठ 82